

अनुक्रमणिका

भूमिका	vi-xv
प्रथम अध्याय : स्त्री-कविता और स्त्री विमर्श	1-43
i. स्त्री-कविता : स्वरूप एवं आशय	
ii. स्त्री-कविता में स्त्री का स्वरूप	
द्वितीय अध्याय : हिंदी में स्त्री-कविता की परंपरा	44-141
i. हिंदी कविता में स्त्री चिंतन	
ii. स्त्री-कविता की ऐतिहासिकता और जातीय स्मृतियाँ	
iii. वैश्वीकरण और स्त्री-कविता	
iv. स्त्री-कविता की वैचारिकी	
तृतीय अध्याय : समकालीन हिंदी स्त्री-कविता के विविध आयाम	142-244
i. समकालीन व समकालीनता के मायने	
ii. समकालीन स्त्री-कविता की प्रवृत्तियाँ	
iii. स्त्री-कविता में आलोचकीय दृष्टिकोण	
iv. स्त्री-कविता में स्त्री-दृष्टि	
चतुर्थ अध्याय : अस्मितावादी विमर्श और स्त्री-कविता	245-352
i. स्त्री-कविता में सबाल्टर्न चिंतन	
ii. स्त्री-कविता का आदिवासी स्वर	
iii. स्त्री-कविता में स्थानीयता और लोकधर्मिता	
iv. पुरुष वर्चस्ववाद, परिवार, विवाह और देह का सवाल	
v. पुरुष कविता में स्त्री स्वर	
vi. स्त्री-कविता की प्रेम-संवेदना	
पंचम अध्याय : स्त्री-कविता का भाषिक पक्ष	353-431
i. स्त्री-कविता की भाषा	
ii. कविता में बिम्ब, रूपक और मिथक का प्रयोग	

उपसंहार	432-443
संदर्भ ग्रंथ सूची	444-466
आधार ग्रंथ	
सहायक ग्रंथ	
पत्र-पत्रिकाएं	
वेबलिनक एवं अन्य संदर्भ	
अनुलग्नक (Annexures)	467-479

भूमिका

भूमिका

हिंदी साहित्येतिहास की परंपरा में स्त्री रचनाशीलता की खोज विगत तीन-चार दशकों में अनुसंधान का विषय रहा है। यह शोध-प्रबंध उसी अनुसंधान का एक लघु प्रयास है। सन् 1990 से 2018 तक की अवधि में प्रकाशित, चर्चित, अचर्चित स्त्री-कवियों के काव्य विषयक चिंतन निश्चित रूप से साहित्य व समाज और जीवन को समझने की एक दृष्टि देता है और कई सवाल खड़े करता है। वर्षों से मनुष्यता के पद से वंचित स्त्री वर्ग की सामाजिक-राजनैतिक स्थिति दयनीय रही है। पितृसत्तात्मक सामाजिक संरचना में स्त्री की नियति महज 'अन्या' की है। इतिहास में स्थान न मिलने का दंश भी हमेशा सालता रहा। उन्हें रूप और यौवन तक सीमित कर देना भी एक साजिश रही है। दुनिया भर के धर्म ग्रंथ और साहित्य में स्त्री-देह को एक ऑब्जेक्ट की तरह ही चित्रित किया गया। पूरब हो या पश्चिम, स्त्री के प्रति एक खास तरह का पूर्वग्रह सभी जगह व्याप्त है। भारतीय उपमहाद्वीप में भी धर्मशास्त्र ने स्त्री व्यक्तित्व को कभी रहस्य, कभी पूजनीय तो कभी नरक के द्वार की संज्ञा से अभिहित किया। इतिहास-लेखन की उपनिवेशवादी और सामंतवादी दृष्टि ने भी स्त्री रचनाशीलता को कभी स्थान नहीं दिया। नौवें दशक के बाद उभरे अस्मितामूलक विमर्शों ने इन बिन्दुओं पर गंभीरता से अपनी बात रखी। हिंदी साहित्येतिहास की परंपरा में भी स्त्री रचनाकारों को वह स्थान नहीं मिला, जिनकी वे हकदार थीं।

विमर्श की वैचारिक बहसों और शाखाओं ने साहित्य, इतिहास, संस्कृति तथा मानव सभ्यता को स्त्री दृष्टि से देखने की वकालत की। इस दृष्टि का परिणाम यह हुआ कि अब तक साहित्य, इतिहास और समाज में जिसे सहज, सामान्य और स्वाभाविक माना जा रहा था ; एक साजिश, रणनीति और शोषण के रूप में नज़र आने लगी। स्त्री-कवियों, इतिहासकारों, चिंतकों ने अपनी प्रज्ञा से उन गवाक्षों को खोज निकाला जिसने स्त्री जाति के अस्तित्व को दफन कर दिया था। आधुनिक दृष्टि और शैक्षिक गतिविधियों ने सामाजिक सुधार में स्त्री को केन्द्र में रखा।

स्त्री-सुधार दरअसल पौरुषिक हिंसक वृत्तियों पर लगाम लगाने का आरंभ था। एकसिरे से साहित्य और इतिहास में स्त्री के ऐतिहासिक बलिदान, योगदान और त्याग की खोज होने लगी। स्त्री विमर्श की वैचारिक बहस ने दुनिया भर की स्त्रियों को एक मंच दिया। सिद्धान्त रूप में यह स्त्री अध्ययन की एक पद्धति के रूप में विकसित हुआ।

समकालीन हिंदी कविता की परंपरा में 'स्त्री-कविता का संबंध लैंगिक अस्मिता से अधिक उसके सामाजिक सांस्कृतिक बोध तथा साहित्यिक परंपरा की विशिष्ट अभिव्यक्ति से है' अर्थात् साहित्य एवं समाज के संदर्भ में 'स्त्री-कविता' पदबंध व्यापक अर्थ को समेटता है। इस शोध को कुल पाँच अध्यायों में विभाजित किया गया है। प्रथम अध्याय 'स्त्री-कविता और स्त्री विमर्श' में 'स्त्री-कविता' पदबंध को विश्लेषित करते हुए उसकी ऐतिहासिक महत्ता को बताया गया है। इस संदर्भ में विभिन्न कवयित्रियों के आत्मकथ्य को सम्मिलित किया गया है। स्त्री-कविता में वर्णित नये अनुभव संसार के साथ नवीन रचना-दृष्टि के महत्त्व को विश्लेषित किया गया है। इस अध्याय में स्त्री-कविता में निर्मित, अभिव्यक्त स्त्री बिम्ब अथवा स्त्री के स्वरूप की विशद चर्चा की गयी है। आज तक साहित्य में पुरुष निर्मित स्त्री बिम्ब ही प्रमुखता से वर्णित-चित्रित किया गया है जबकि स्वयं स्त्री का, स्त्री के प्रति दृष्टिकोण पूर्णतः पुरुष निर्मित स्त्री बिम्ब से अलग है। द्वितीय अध्याय 'हिंदी में स्त्री-कविता की परंपरा' है। हिंदी कविता में चित्रित स्त्री के विभिन्न स्वरूपों का तुलनात्मक विश्लेषण करते हुए स्त्री रचनाशीलता के सूत्रों की चर्चा की गयी है। इस अध्याय में हिंदी साहित्य में ओझल स्त्री-कविता की क्रमबद्ध परंपरा को बताने का प्रयास किया गया है। हिंदी में स्त्री-कवियों की एक लंबी परंपरा रही है। लेकिन पुरुषवादी सामाजिक संरचना ने स्त्री-कवियों एवं उनके साहित्य को इतिहास से बाहर रखा। स्त्री-कविता में उभर रहे स्त्री की जातीय स्मृतियाँ एवं ऐतिहासिक विवेक ने स्त्री-कविता के वैचारिक पक्ष को एक मजबूत आधार प्रदान किया है। स्त्री-कविता में ऐतिहासिकता से पर्याय स्त्री के रचनात्मक कृतित्व, इतिहास में हुए उपेक्षा भाव तथा स्त्री की अस्मिता के इतिहास से है। जातीय स्मृतियाँ

स्त्री जाति मात्र के उत्थानवादी उपलब्धियों से हैं। नब्बे के दशक में वैश्वीकरण की अवधारणा ने पूरे विश्व में हलचल मचा दिया था। वैश्वीकरण के प्रभाव से भारी मात्रा में स्त्री-पुरुषों का रोजगार, शिक्षा आदि के लिए विस्थापन हुआ। स्त्रियों में शिक्षा-प्रसार की गति अपेक्षाकृत तीव्र हुई। अतः वैश्वीकरण और स्त्री-कविता के विभिन्न घटकों की विस्तृत चर्चा की गयी है। वैश्वीकरण और विकासवादी सैद्धांतिक मॉडेल ने स्त्रियों, दलितों और आदिवासी आदि सभी वंचित वर्ग को सबसे अधिक विघटित किया है। स्त्री-कवियों के कला-साहित्य, कविता संबंधी मंतव्यों के आधार पर बन रही स्त्री कविता की वैचारिकी ने साहित्य-अध्ययन की पूर्व प्रचलित विभिन्न दृष्टियों को प्रभावित किया है। अतः स्त्री-कविता में निर्मित हो रही वैचारिकी को भी उक्त अध्याय में रेखांकित करने का प्रयास किया गया है।

तृतीय अध्याय 'समकालीन हिंदी स्त्री-कविता के विविध आयाम' में समकालीनता को परिभाषित करते हुए स्त्री-कविता की प्रवृत्तियों, आलोचकीय टिप्पणियों और स्त्री-दृष्टि आदि संदर्भों का विश्लेषण किया गया है। सभी कवयित्रियों का अपने समकाल के प्रति सचेतनता उन्हें एक विशिष्ट दृष्टि प्रदान करती है जो न सिर्फ अपने अतीत बल्कि भविष्य के प्रति भी सजग और आशान्वित करता है। समकालीन हिंदी कविता में स्त्री-कविता निरंतर कुछ नया जोड़ रही है। विभिन्न वर्गों के अनुभूतित यथार्थ और कविता के जनचरित्र अथवा जनसरोकारोन्मुखी भाव को कवयित्रियों ने और प्रखर बनाया है। स्त्री-कविता पिछले तीन-चार दशकों से निरंतर अपना स्वरूप गढ़ रही है। स्त्री-कवियों की संख्या में लगातार बढ़ोत्तरी हुई है। लेकिन स्त्री-कविता की आलोचना हेतु हिंदी काव्यालोचन में अभी आलोचकीय अभाव है। पूर्व प्रचलित स्थापित काव्यालोचना के मानदंडों पर स्त्री-कविता की आलोचना, स्त्री-कविता के साथ अन्याय करना होगा। अब तक स्त्री-कविता संबंधी आलोचना इसी विवेकहीनता की शिकार रही है। अतः स्त्री-कविता संबंधी विभिन्न आलोचकीय दृष्टिकोणों के आलोचनात्मक विश्लेषण का प्रयास किया गया है तथा स्त्री-कविता में निहित विषय-वस्तु व शिल्प के आधार पर काव्यालोचना हेतु पृथक

आलोचकीय विवेक की चर्चा की गयी है। इस संदर्भ में अनामिका, रोहिणी अग्रवाल, सुजाता और रेखा सेठी जैसे आलोचकों की दृष्टि का विशेष महत्त्व है। स्त्री-कविता के संसार को समझने के लिए स्त्री-दृष्टि एक महत्त्वपूर्ण घटक बन सकता है। सांसारिक अनुभवों एवं कला, साहित्य, संस्कृति, ज्ञान आदि से संबंधित स्त्री-दृष्टि का विश्लेषण इस अध्याय को प्रासंगिक बनाता है।

चतुर्थ अध्याय 'अस्मितावादी विमर्श और स्त्री-कविता' में नौवें दशक से अब तक अस्मितामूलक विमर्शों के बीच स्त्री-कविता की महत्ता व प्रासंगिकता को सामाजिक परिवर्तनों के बरक्स देखने का प्रयास किया गया है। स्त्री-कविता का दलित व आदिवासी स्वर स्त्री-कविता के ग्राफ को व्यापक मनोभूमियों से जोड़ता है। पितृसत्ता, परिवार, विवाह अथवा देह के प्रश्नों पर स्त्री-कवियों के मौलिक चिंतन को विश्लेषण में शामिल किया गया है। अस्मितावादी विमर्श की कविताएं समाज व साहित्य की प्रत्येक परत को सूक्ष्मातिसूक्ष्म ढंग से अभिव्यक्त करती हैं। मुख्यधारा के साथ-साथ हाशियाकृत समुदाय का स्वर भी यहाँ प्रमुखता से मुखरित हुआ है। स्त्री-कविता अपने आप में स्त्री अस्मिता का विमर्श है। अतः इस अध्याय में स्त्री के सामाजिक काव्यानुभवों का विश्लेषण स्वतंत्र रूप से किया गया है। स्त्री-कविता के सामाजिक, राजनैतिक, वैश्विक तथा स्थानीय स्वरों ने स्त्री के बेपर्दे संसार को सम्यक रूप दिया है। सबाल्टर्न चिंतन नब्बे के दशक में मुख्य मुद्दे के रूप में उभरकर सामने आया। समाज में उपेक्षित, अल्पसंख्यक, दलित-वंचित आदि वर्गों की आवाज व अधिकार का संघर्ष इस चिंतन का केन्द्रीय सरोकार है। स्त्री-कविता में सबाल्टर्न चिंतन समाज में समता के उद्घोष का भी चिंतन है।

स्त्री-कविता में अभिव्यक्त आदिवासी स्वर अपनी दुरावस्था के साथ ही एक नवीन सौंदर्यबोध और जीवन-दर्शन को भी सहजता से प्रस्तुत करता है। आदिवासी समुदाय व समाज का साहित्य जगत में पदार्पण साहित्य की कमी को पूरा करता है। स्त्री-कविता में अंतर्भुक्त स्थानीयता और लोकधर्मिता के तत्वों का भी अनुशीलन-परिशीलन करने का प्रयास किया गया है। आज प्रत्येक स्त्री-कवि का अपने लोक से गहरा जुड़ाव है। अपने परिवेश एवं लोक

संस्कार को वे निःसंकोच भाव से कविता में प्रयोग करती हैं। इस अध्याय में पुरुष वर्चस्ववाद की अधुनातन चुनौतियों एवं स्त्री-देह से संबंधित सवालों की पड़ताल की गयी है। पुरुष वर्चस्ववाद ने स्त्री को पूर्णतः उसकी देह में गुलाम बना दिया है। स्त्री-कविता इस गुलामी तंत्र और वर्चस्व नीतियों को उजागर करते हुए उनकी नीतियों पर कई प्रश्न खड़े करती है। परिवार, विवाह और यौनिकता - ये तीनों ऐसे प्रत्यय हैं जिनसे स्त्री-जीवन जन्म से अभिशप्त कर दी जाती है। इन प्रत्ययों का संरक्षण पुरुषवादी मूल्यों से होता आया है। स्त्री का निजी दृष्टिकोण इसमें एकसिरे से गायब है। सामाजिक संरचना में धर्म, परंपरा, संस्कृति के साथ इन तीनों प्रत्यय का पुरुषवादी पाठ स्त्री के गुलामी के उपकरण रहे हैं। स्त्री-कवियों के लिए इन तीनों ही प्रत्ययों का अर्थ वही नहीं है जो एक पुरुष के लिए होता है। पितृसत्तात्मक साँचों में ढली प्रेम की धूर्तता को कवयित्रियों ने संदेह के घेरे में लाया है। प्रेम के यातनामय रूप को उद्धाटित कर उसे मुक्त किया है अर्थात् स्त्री-कवियों ने प्रेम जैसे तत्व को भी अलग भाष्य दिया है। समकालीन कवियों में कुछ ऐसे भी कवि हुए हैं जिन्होंने स्त्री की वास्तविक स्थिति का अंकन अपनी कविताओं में किया है। उन कवियों एवं उनकी कविताओं की चर्चा भी इस अध्याय में शामिल की गई है।

पंचम अध्याय 'स्त्री-कविता का भाषिक पक्ष' में स्त्री-कविता में प्रयुक्त स्त्री-भाषा के वैविध्य और मातृमना दृष्टि का विश्लेषण किया गया है। स्त्री-कविता का भाषिक अवगुंठन पूर्व प्रचलित-विकसित काव्यभाषा से सर्वथा भिन्न है। एक नयी शब्द संपदा, भाषिक अनुभव तथा प्रतीकों, बिम्बों की एक नयी दुनिया स्त्री-कविता सदैव रच रही है। स्त्री-भाषा ही स्त्री-कविता में प्राणतत्व का संचार करती है क्योंकि यहाँ भाषा में गर्जन-तर्जन के बजाय एक सुधारवादी, संवादधर्मी तथा समतामूलक महत्त्व का वार्त्तालाप है जो एक-दूसरे को हीन या कमतर सिद्ध करने के स्थान पर एक-दूसरे के अस्तित्व को बराबरी के भाव से स्वीकार करती है। स्त्री-काव्यभाषा की इन सभी विशिष्टताओं को उक्त अध्याय में तार्किक ढंग से विश्लेषित किया गया है। स्त्री-कविता की भाषा बिल्कुल ही नये लोकमानस का दिग्दर्शन कराती है। इस तरह स्त्री-

कविता की भाषा स्त्री-कविता के मूल्यांकन का एक शास्त्र भी है। स्त्री-कविता के अनुभव-संसार में काव्यबिम्ब, रूपक तथा मिथकों का विशेष महत्त्व है। स्त्री-कविता अपनी प्रामाणिकता हेतु न सिर्फ नवीन बिम्ब और रूपक का प्रयोग करती है बल्कि मिथकों के सहारे भी कविता की वाग्धारा को संपुष्ट करती है। स्त्री-कविता मिथकीय चरित्रों के रूढ़ अर्थ-छवियों को भी अपने काव्य-विवेक से नवीन मानस में परिवर्तित करती दिखती है। अर्थात् स्त्री-कविता जब सीता, सावित्री, शूर्पणखा आदि किसी भी मिथकीय अथवा जैविक चरित्र का उसी संदर्भ में चित्रण नहीं करती जिसके लिए वे रूढ़ है, अपितु वे उन्हें आधुनिक संदर्भों से जोड़कर उसे एक प्रतिपक्ष के रूप में गढ़ती है।

इस शोध में ग्यारह (11) कवयित्रियों (गगन गिल, कात्यायनी, अनामिका, शुभा, सविता सिंह, रंजना जायसवाल, अनीता वर्मा, नीलेश रघुवंशी, रजनी तिलक, सुशीला टाकभौरै और निर्मला पुतुल आदि) की कविताओं एवं उनके रचना-संसार को केन्द्र में रखा गया है। शोध की गुणवत्ता हेतु सन् 1990 से 2018 तक की अवधि को लिया गया है। लगभग तीन दशकों की रचनाशीलता साहित्य, समाज तथा राष्ट्र में होने वाले परिवर्तनों की गहरी छाप इन कवयित्रियों में देखा जा सकता है। स्त्री जीवन एवं स्त्री के लिए रूढ़ बना दिये गए ज्ञान के अनुशासनों पर स्त्री-कवियों का पक्ष कई पूर्वनिर्मित तथाकथित सिद्धांतों-विचारधाराओं को संदेह के घेरे में लाता है। श्रम और सौन्दर्य के मानक स्त्रियों के लिए वही नहीं होते जो पुरुष वर्ग के बीच व्याप्त है। वैश्विक भावभूमि और स्त्री सशक्तिकरण के आलोक ने स्त्री संवर्ग में एकजुटता पैदा की है। सामाजिक असमानता, विषमता तथा जेंडर संबंधी पूर्वग्रहों को दूर कर बेहतर समाज की संकल्पना ही स्त्री-चिंतन का मूल लक्ष्य है। यही कारण है कि स्त्री-कवि अपनी कविताओं में बहनापा भाव से विश्व भर की स्त्रियों से जुड़ती हैं तो दूसरी ओर स्त्री-पुरुष संबंधों को नवीन मानकों पर कसना चाहती है तथा हाशियाकृत समुदाय की आवाज को अपनी आवाज बनाना चाहती है।

गगन गिल, कात्यायनी, अनामिका, सविता सिंह आदि की कविताएं जहां स्त्री की अस्मिता, अस्तित्व और मुक्ति के सवाल को विमर्श की व्यापक भूमि देती नजर आती हैं, वहीं दूसरी ओर शुभा, रंजना जायसवाल, अनीता वर्मा और नीलेश रघुवंशी की कविताएं भारतीय समाज के वर्गगत ढांचा के बीच स्त्री-जीवन की बदहाली और जिजीविषा वृत्ति की अप्रकट आकांक्षा को स्वर देती है। परिवार, समाज में रहकर प्रतिरोध और उसमें सुधार की संभावनाओं की उम्मीद यहाँ अब भी बनी हुई है। रजनी तिलक, सुशीला टाकभौरै और निर्मला पुतुल, वंदना टेटे आदि की कविताएं समाज की विद्रूपता को, भेदभाव की नीतियों को बड़ी सहजता से उकेरती हैं। घोर अपमान और हिंसा के बावजूद सुंदर समाज का स्वप्न इनके विराट हृदय और दृष्टि का परिचायक है। धर्म, परंपरा, संस्कृति, आख्यानो में व्याप्त स्त्री-द्वेष को स्त्री-कवियों ने अबोध बालक की तरह पुचकार कर छोड़ दिया है। पितृसत्ता के हिमायती पुरुष हो स्त्री या संस्था या ग्रंथ, आज अपने अस्तित्व की लड़ाई उन्मादी और हिंसक शब्दावली में ही कर रहे हैं। इक्कीसवीं सदी में स्त्रियों, दलितों एवं अल्पसंख्यकों का उभार नवीन मानव-सभ्यता के जीवन-दर्शन का भी उभार है। अतः इन स्त्री-कवियों की कविताओं से गुजरना उसी मानव-सभ्यता के जीवन दर्शन की निर्मिति को महसूस करना है। निश्चित रूप से इन कविताओं का शिल्प भी अलंकारों के बोझ से दबा नहीं है। वह प्रेम की बालसुलभ भाषा में अपनी बात कहता है और हृदय परिवर्तन की आस रखता है। हिंसा, घृणा, उन्माद, साम्प्रदायिक विद्वेष की दुर्भावना से विरत यह जीवन को सहेजने का काव्य है।

इस शोध को इस मुकाम तक पहुंचाने में मेरे शोध निर्देशक डॉ. अनिंद्य गंगोपाध्याय का अहम योगदान है। उनके कुशल निर्देशन, सहयोग और प्रोत्साहन के बिना यह संभव नहीं हो पाता। अतः हृदय से उन्हें आभार प्रकट करता हूँ। उनके साथ विचार-विमर्श, वार्ता, बहस के दौरान न सिर्फ विषय को समझने की दृष्टि मिली बल्कि जीवन के असाध्य संकल्पनाओं-

घटनाओं-मुद्दों इत्यादि के प्रति भी समझ बनती रही। उनका साथ और साहचर्य ही मुझे इस शहर में बने रहने का संबल देता रहा है।

प्रेसीडेंसी विश्वविद्यालय, हिंदी विभाग के पूर्व अध्यक्ष प्रो. तनुजा मजूमदार और प्रो. वेद रमण पाण्डेय जी के प्रति भी मैं आभार प्रकट करता हूँ जिनके महत्त्वपूर्ण सुझाव और स्नेहिल सहयोग समय-समय पर मिलते रहे हैं। हिंदी विभाग के डॉ. मैरी हांसदा, डॉ. ऋषि भूषण चौबे तथा डॉ. मुन्नी गुप्ता जी के साथ ही विभाग के सभी सदस्यों के प्रति भी आभार प्रकट करता हूँ। इतिहास विभाग की डॉ. मृदु राय, डॉ. नवरस जाट अफरीदी, बांग्ला विभाग के डॉ. शाओन नंदी के प्रति आभार प्रकट करना औपचारिकता से अधिक उनके प्रति श्रद्धा अर्पित करना है। इनके सुझावों ने शोध को अंतरविषयक दृष्टि प्रदान किया है। बाह्य विशेषज्ञ के रूप में कलकत्ता विश्वविद्यालय (हिंदी विभाग) की प्रो. राजश्री शुक्ला और बर्धवान विश्वविद्यालय (हिंदी विभाग) की प्रो. रूपा गुप्ता के प्रति विशेष आभार। इनके सुझाव, सहयोग और प्रोत्साहन ने निरंतर पढ़ने-लिखने की प्रेरणा दी है। अपने शोधार्थी मित्रों मधु, नेहा, निधि, किरीट, प्रियंका, पूजा, श्रद्धा, आराधना, मानोज, बृजेश और वरिष्ठ शोधार्थी स्मिता जी, जय प्रकाश जी, मुनमुन जी के प्रति आभार से अधिक स्नेह। भाई अमित, रामलखन और दिनेश को भी तहे दिल से आभार। ये सभी हमारे जीवन के अभिन्न अंग हैं जिन्हें ताउम्र साथ बनाये रखना है। शोध के दौरान उनसे संवाद, बहस का सिलसिला अब तक बरकरार है। उन सभी मित्रों के प्रति भी आभार जिन्होंने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से शोध-सामग्री उपलब्ध कराने में हमेशा तत्पर रहें। इन सबके साथ ही जन्मदात्री माँ-बाबूजी (बिमला देवी-बासुकी राय) के प्रति कृतज्ञ हूँ। उनके संघर्षों, चुनौतियों और आस ने ही मुझे इस काबिल बनाया। अपनी बहन, दीदी, चाची, बुआ, दादी की विशेष स्मृतियाँ ही इस शोध-लेखन की थाती रही हैं, उनकी कभी न खत्म होने वाली बातें और मासूम तर्कों के सम्मुख मेरा यह प्रयास प्रस्तुत है। आशा है, उन्हें यह देखकर खुशी होगी। मेरे हर लिखे की प्रथम पाठक मेरी हमसफर साथी प्रीति और छोटे भाई आकाश को आकाश भर का स्नेह।

विभागीय एवं केन्द्रीय पुस्तकालय, (प्रेसीडेंसी विश्वविद्यालय, कोलकाता), केन्द्रीय पुस्तकालय, (कलकत्ता विश्वविद्यालय), राष्ट्रीय पुस्तकालय, (कोलकाता), भारतीय भाषा परिषद, (कोलकाता), केन्द्रीय पुस्तकालय, (दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली), केन्द्रीय पुस्तकालय, (जवाहरलाला नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली), राहुल सांकृत्यायन केन्द्रीय पुस्तकालय, (महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा), केन्द्रीय पुस्तकालय, (हैदराबाद विश्वविद्यालय, हैदराबाद), विभिन्न राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठियों और इंटरनेट पर उपस्थित सैकड़ों ई-सामग्री का समुचित प्रयोग इस शोध को पूरा करने में काफी मददगार रहा है। इन संस्थाओं और संस्थाओं में कार्यरत कर्मियों के प्रति पुनः पुनः आभारा